National Journal of
Hindi & Sanskrit Research

ISSN: 2454-9177
NJHSR 2023; 1(49): 201-203
© 2023 NJHSR
www.sanskritarticle.com

डॉ. दामोदर परगाँई
सहायकाचार्य, व्याकरण विभाग,
उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय,
हरिद्वार, २४९४०२.

Correspondence:
डॉ. दामोदर परगाँई
सहायकाचार्य, व्याकरण विभाग,
उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय,
हरिद्वार, २४९४०२.

संस्कृतवाङ्मय में व्याकरणशास्त्र की प्रासङ्गिकता

डॉ. दामोदर परगाँई

शोधसार

भारतस्य प्रतिष्ठे द्वे संस्कृतं संस्कृतिस्तथा। अर्थात् भारत की प्रतिष्ठा संस्कृत और संस्कृति से है। संस्कृत शब्द से यहां तात्पर्य संस्कृत भाषा तथा उसमें निबद्ध संस्कृत वाङ्मय से है। भारतीय ज्ञान परम्परा में सकल ज्ञानराशि वेद मूलक है। उस ज्ञानराशि के सम्यक् ज्ञान के लिए ऋषियों ने शिक्षा, निरुक्त, व्याकराणादि वेदाङ्गो का प्रणयन किया। पूर्वोक्त वेदाङ्गों में प्रमुखता मुख स्वरूप व्याकरण की है। इस सन्दर्भ में आचार्य पतञ्जलि कहते हैं – **"प्रधानं च षट्-स्वङ्गेषु व्याकरणम्"**।[1] व्याकरण शास्त्र की विशेषता का प्रतिपादन करने के सम्बन्ध में आचार्य भर्तृहरि कहते है वाणी की शोधिका, सभी विद्याओं की प्रकाशिका, मोक्ष प्राप्ति की सरततम पद्धति व्याकरण विद्या है।[2] यह तो सर्व विदित है कि संस्कृत भाषा विश्व की सभी भाषाओं में शीर्ष पर विद्यमान है और उस भाषा का संरक्षण व्याकरण शास्त्र के द्वारा ही सम्भव है। अतः एव भारतीय ज्ञान परम्परा के प्रचार प्रसार के लिए, संस्कृत शास्त्रों और संस्कृत भाषा के संरक्षण की महती अवश्यकता है और यह व्याकरण से ही सम्भव है। भारतीय ज्ञान परम्परा में व्याकरण शास्त्र की उपदेयता तो प्राचीन काल से ही है। अतः इसका साङ्गोपाङ्ग रूप से वर्णन प्रस्तुत शोधपत्र में किया गया है।

संकेतशब्द – व्याकरण, संस्कृत, वेद, ज्ञान परम्परा, उपादेयता,

प्रस्तावना

सकलज्ञानराशि अपौरुषेय वेद में अन्तर्निहित है और उस ज्ञान को सम्यक्तया समझने के लिए ऋषियों ने छन्द, कल्प, ज्योतिष, निरुक्त, शिक्षा और व्याकरण इन छः वेदाङ्गों का प्रणयन किया। यथोक्त –

छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तकल्पोऽथ पठ्यते
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरूक्तं श्रोत्रमुच्यते।
शिक्षा घ्राणन्तु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्
तस्मात्साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते॥[3]

उक्त सभी वेदाङ्गों में प्रमुख मुखस्वरुप व्याकरण ही है।[4] व्याकरणशास्त्र की विशेषता को प्रतिपादित करते हुए आचार्य भर्तृहरि कहते हैं, कि व्याकरणशास्त्र मोक्षप्राप्ति के लिए सरलतम पद्धति है, तथा वाणी का शोधन करने वाला और सभी विधाओं को प्रकाशित करने वाला शास्त्र है।[5] व्याकरण शास्त्र की परम्परा द्विधा चलायमान है। प्रथम परम्परा तो ब्रह्म से प्राप्त होती है जिसके सन्दर्भ में ऋक्तन्त्र में कहा गया है कि **"इदमक्षरं छन्दोवर्णशः समनुक्रान्तं ब्रह्मा बृहस्पतये प्रोवाच, बृहस्पतिरिन्द्राय, इन्द्रो भरद्वाजाय, भरद्वाज**

ऋषिभ्यः, ऋषियो ब्राह्मणेभ्यः।[6] ऋक्तन्त्र के इस वचन से यह स्पष्ट होता है कि व्याकरणशास्त्र का आदि प्रवक्ता ब्रह्मा है, और फिर इसका उपदेश सर्वप्रथम ब्रह्मा ने बृहस्पति को दिया, बृहस्पति ने इन्द्र को, इन्द्र ने भरद्वाज को, भरद्वाज ने ऋषियों को तथा ऋषियों ने इसका उपदेश ब्राह्मणों को दिया। अतः ब्रह्मा बृहस्पति, इन्द्र तथा भरद्वाज ये क्रमशः व्याकरणशास्त्र के आचार्य हैं। द्वितीय परम्परा महेश्वर से प्राप्त होती है जिसके विषय में नन्दिकेश्वर काशिका में कहा गया है कि –

नृत्तावसाने नटराजराजो ननाद ढक्कां नवपञ्चवारम्।
उद्धर्तुकामः सनकादिसिद्धानेतद्विमर्शे शिवसूत्रजालम्॥[7]

इसी परम्परा की पुष्टि पाणिनीय शिक्षा में उल्लिखिति निम्नलिखत श्लोक भी करता है –

येनाक्षरसमाम्नायमधिगम्य महेश्वरात्।
कृत्स्नं व्याकरणं प्रोक्तं तस्मै पाणिनये नमः॥[8]

पूर्वोक्त आचार्यों के क्रम का अवलोकन करने के बाद यह विदित होता है कि व्याकरणशास्त्र की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। वर्तमान में साङ्गोपाङ्गरूप में यदि कोई व्याकरण शास्त्र प्राप्त है, तो वह पाणिनीय व्याकरण है। आचार्य पाणिनि ने भगवान् महेश्वर से वर्णसमाम्नाय प्रसादरूप में प्राप्त कर सकल व्याकरणशास्त्र का अन्वाख्यान किया था।[9]

विषय उपस्थापन

शब्दों में प्रकृति-प्रत्यय आदि का निर्धारण करके अर्थबोध कराना व्याकरणशास्त्र का ही कार्य है- **'व्याक्रियन्ते व्युत्पाद्यन्ते शब्दाः अनेनेति शब्दज्ञानजनकं व्याकरणम्'**। किस शब्द में कौन सी धातु है कौन सा प्रत्यय है तथा तदनुरूप शब्द का अर्थ क्या हो सकता है, इन तथ्यों का सही ज्ञान व्याकरण के अध्ययन के अभाव में सम्भव नहीं है। किसी भी शास्त्र के अध्ययन के लिये यह आवश्यक होता है कि उस शास्त्र का प्रयोजन जाने; क्योंकि प्रयोजन के बिना किसी कार्य में मन्द पुरुष की भी प्रवृत्ति नहीं होती - **'प्रयोजनमनुद्दिश्य मूढोऽपि न प्रवर्तते'**। आचार्य कुमारिल भट्ट ने अपने श्लोकवार्तिक में ठीक ही कहा है-

सर्वस्यैव हि शास्त्रस्य कर्मणो वापि कस्यचित्।
यावत् प्रयोजनं नोक्तं तावत् तत् केन गृह्यते।।

अर्थात् सब शास्त्र या किसी कर्म का जबतक प्रयोजन न कहा जाय, तब तक उसमें किसी की प्रवृत्ति कैसे होगी? यह ठीक है, किंतु इस विषय में श्रुति कहती है कि **'ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च'** अर्थात् ब्राह्मण (द्विजमात्र) के द्वारा अनिवार्य संध्या-वन्दनादि की तरह धर्माचरण तथा षडङ्ग वेदों का अध्ययन एवं मनन किया जाना चाहिये। फिर भी मुनिवर कात्यायन ने प्रयोजन का उद्देश्य बतलाते हुए कहा **–**

'रक्षोहागमलध्वसंदेहाः व्याकरणप्रयोजनम्'। अर्थात् रक्षा, ऊह, आगम, लघु और असंदेह ये व्याकरण अध्ययन के प्रमुख प्रयोजन हैं।

रक्षा- इस विषयमें भाष्यकार पतञ्जलिने कहा है कि 'वेदों की रक्षा के लिये व्याकरण पढ़ना चाहिये। लोप, आगम और वर्ण-विकार को जानने वाला ही वेदों की रक्षा कर सकेगा। कहने का अभिप्राय यह है कि व्याकरण के नियमानुसार वर्ण-लोपादि के ज्ञान के बिना शास्त्रों के आकर स्वरूप वेद का परिपालन नहीं हो सकता। इतना ही नहीं; कात्यायन और पतञ्जलि का मत है कि व्याकरणज्ञान के अभाव में मन्त्रों में विकार उत्पन्न होगा । निष्कर्ष यह है कि व्याकरण पुरुषार्थ का साधक उपाय है, क्योंकि वेदार्थ-ज्ञान, कर्मानुष्ठानजनित और उपनिषद् जनित सुख वस्तुतः व्याकरण अध्ययन का ही फल है।[10]

ऊह- ऊह का अर्थ होता है तर्क-वितर्क अर्थात् नूतन पदों की कल्पना। मीमांसकों का कहना है कि यह विषय तो मीमांसा शास्त्र का है। इस विषय में भाष्यकार पतञ्जलि का मत है कि 'वेद में जो मन्त्र कथित हैं, वे सब लिङ्गों एवं विभक्तियों में नहीं हैं। अतः उन मन्त्रों में यज्ञ में अपेक्षित रूप से लिङ्ग और विभक्ति का व्यतिहार करना चाहिये और यह दुष्कर कार्य वैयाकरणके द्वारा ही सम्भव है। अतः व्याकरण अवश्य पढ़ना चाहिये। **यथोक्त - ऊहः खल्वपि- न सर्वैर्लिङ्गैर्न च सर्वाभिर्विभक्तिभिर्वेदे मन्त्रा निगदिताः। ते चावश्यं यज्ञगतेन पुरुषेण यथायथं विपरिणमयितव्याः। तान्नावैयाकरणः शक्नोति यथायथं विपरिणमयितुम्। तस्मादध्येयं व्याकरणम्॥**[11]

आगम- व्याकरण के अध्ययन के लिये स्वयं श्रुति ही प्रमाणभूत है। श्रुति कहती है कि ब्राह्मण (द्विज) का अनिवार्य कर्तव्य है कि वह 'निष्कारणधर्म का आचरण तथा अङ्गसहित वेद का अध्ययन करे। वेद के षडङ्गों में व्याकरण ही मुख्य है। मुख्य विषय में किया गया प्रयत्न विशेष फलवान् होता है। अतः श्रुति प्रामाण्य को ध्यान में रखकर व्याकरण का अध्ययन करना चाहिये।[12]

लघु- इस विषय में श्रुति कहती है कि देवगुरु बृहस्पति इन्द्र को दिव्य सहस्र वर्ष पर्यन्त अध्यापन किया, फिर भी विद्याका अन्त नहीं हुआ। संक्षेपीकरण की आवश्यकता थी। अतएव महर्षि पतञ्जलि ने कहा कि शास्त्र का लघुता सम्पादन भी व्याकरण का प्रयोजन है। **जैसे कि - लघ्वर्थं चाध्येयं व्याकरणम्- ब्रह्मणेनावश्यं शब्दा ज्ञेया इति। न चान्तरेण व्याकरणं लघुनोपायेन शब्दाः शक्या ज्ञातुम् ।।**

असंदेह - व्याकरण प्रयोजन के विषय में अन्तिम कारण है असंदेह। संदेह को दूर करने के लिये व्याकरण का अध्ययन अवश्य करना चाहिये। जैसे- 'स्थूलपृषतीम्' यहाँ बहुव्रीहि समास होगा अथवा तत्पुरुष? यही संदेह का स्थान विचार में है। निष्कर्ष यह है कि अवैयाकरण मन्त्रों के स्वर-विचार में कदापि समर्थ नहीं हो सकेगा, इसलिये व्याकरणशास्त्र सप्रयोजन है।[13] भले ही मीमांसक इस विषय में आक्षेप करते हों। वैयाकरण तो स्पष्टरूप से कहते हैं-

यद्यपि बहुनाधीषे तथापि पठ पुत्र व्याकरणम्।
स्वजनः श्वजनो मा भूत् सकलं शकलं सकृच्छकृत्॥

अर्थात् हे पुत्र! तुमने **यदि** अनेक अन्य शास्त्रों का तो अध्ययन **नहीं भी** किया **है**, फिर भी व्याकरणशास्त्र अवश्य पढ़ो, जिससे तुम्हें शब्दोंका यथार्थ ज्ञान हो सके।

महर्षि पतञ्जलि ने तो उपर्युक्त प्रयोजनों के अतिरिक्त म्लेच्छता निवारण को भी प्रयोजन कहा है, जिससे अपशब्दों का प्रयोग सम्भव न हो। इस विषय में शतपथ ब्राह्मण भी सहमत है। अतः **भारतीय ज्ञान परम्परा में** व्याकरण **के** अध्ययन **उपादेयता सर्वविध सिद्ध है,** क्योंकि कहा गया है- **'एकः शब्दः सम्यग् ज्ञातः शास्त्रान्वितः सुप्रयुक्तः स्वर्गे लोके च कामधुग् भवति'।** अर्थात् एक शब्द का भी अच्छी तरह से ज्ञान प्राप्त करके यदि शास्त्रानुसार उसका प्रयोग किया जाय तो स्वर्गलोक में तथा इस लोक में सफलता प्राप्त होती है। अब प्रश्न यह उठता है कि ऐन्द्र आदि आठ व्याकरणों में कौन-सा व्याकरण वेदाङ्ग का प्रतिनिधित्व करता है। आजकल प्रचलित और प्राप्त व्याकरणों में पाणिनीय व्याकरण ही प्राचीनतम है। साथ ही अन्य व्याकरणों में पाणिनीय व्याकरण अधिक लोक प्रचलित और लोकप्रिय है। अतः प्राचीन तथा सर्वाङ्गपूर्ण होने के कारण पाणिनीय व्याकरण ही वेदाङ्ग का प्रतिनिधित्व करता है। इससे ऐन्द्र आदि व्याकरणों की प्राचीनता के विषय में कोई संदेह नहीं करना चाहिये।

व्याकरण की परम्परा वैदिक काल से ही चली आ रही है**,** परन्तु सर्वांगपूर्ण, सुव्यवस्थित व्याकरण छठीं शताब्दी ई०पू० से प्रारम्भ हुआ जब महर्षि पाणिनि ने तीन हजार नौ सौ छियान्बे सूत्रों से समन्वित, आठ अध्यायों से संवलित अष्टाध्यायी संज्ञक ग्रन्थ की रचना की। पाणिनिकृत अष्टाध्यायी 'गागर में सागर' वाली उक्ति को चरितार्थ करने वाला ग्रन्थ है। इसमें कुल आठ अध्याय हैं**,** प्रत्येक अध्याय में चार-चार पाद हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण ग्रन्थ बत्तीस पादों में विभक्त है। लौकिक संस्कृत के साथ ही साथ वैदिक भाषा का भी विवेचन पाणिनि की दृष्टि से नहीं बचा है। अष्टाध्यायी पर पतञ्जलि ने विस्तृत भाष्य की रचना की है**,** जिसे महाभाष्य संज्ञा से विभूषित किया गया है। कात्यायन ने वार्तिक लिखकर पाणिनि की दृष्टि से कतिपय ओझल तथ्यों का स्पष्टीकरण कर दिया है। इस प्रकार इन तीनों मुनियों पाणिनि, कात्यायन और पतञ्जलि को पाकर व्याकरणशास्त्र परिपूर्णता को प्राप्त कर लिया है। पाणिनीय व्याकरण की परिधि में वैदिक और लौकिक दोनों ही क्षेत्र आ जाते हैं। अष्टाध्यायी में वैदिक व्याकरण से सम्बद्ध प्रायः ५०० सूत्र हैं जो विभिन्न अध्यायों में बिखरे स्वरप्रक्रिया से सम्बद्ध सभी सूत्र प्रायः षष्ठ अध्याय के प्रथम और द्वितीय पादों में हैं। वेद से सम्बन्धित अधिसंख्य सूत्र अष्टम अध्याय में हैं। सिद्धान्त कौमुदीकार ने 'वैदिकी प्रक्रिया' के अन्तर्गत सभी सूत्रों का विषयानुसार वर्गीकरण कर दिया है।

शब्दार्थ में संयुक्त संस्कृत वाङ्मय रूपी ज्ञानराशि को समझना व्याकरण शास्त्र के अध्ययन के बिना असाध्य है। भारतीय ज्ञान परम्परा के मूल में संस्कृत वाङ्मय ही है। अतः भारतीय ज्ञानपरम्परा में व्याकरणशास्त्र की उपादेयता सार्वकालिक एवं सार्वभौमिक रूप से सर्वथा सिद्ध है।

सन्दर्भग्रन्थसूची

- आचार्यपाणिनि, अष्टाध्यायी, व्याख्याकार श्रीगोपालदत्तपाण्डेय, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन वाराणसी, २०१७.
- आचार्यपतञ्जलि,व्याकरणमहाभाष्यम, पस्पशाह्निकम्, डॉ. हरस्व-रूपवशिष्ठ, (भाष्यबोधिनिहिन्दीव्याख्योपेतम्) रचनाप्रकाशन ५७, नाटाणीभवन, चांदपोलबाजार जयपुर, २०१७.
- नागेशभट्ट, परमलघुमञ्जूषा, व्याख्याकार लोकमणिदाहाल, चौखम्बासुरभारतीप्रकाशन वाराणसी, २०१७.
- भर्तृहरि, वाक्यपदीयम, (ब्रह्मकाण्डम्) व्याख्याकार- डॉ. शिवशंकर अवस्थी, चौखम्बा विद्याभवन प्रकाशन, वाराणसी, १९९७.
- भट्टोजीदीक्षित, वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी, (वासुदेवदीक्षितोपेतं बालमनोरमाटीका) व्याख्याकार श्रीगोपालदत्तपाण्डेय, चौखम्बा-संस्कृतप्रतिष्ठान, १९८५.
- आचर्यपाणिनि, पाणिनीयशिक्षा, सम्पादक, शिवराजाचार्य-कौंडिनयन, चौखंभा विद्या भवनप्रकाशक, वाराणसी, २०१२.

संदर्भः

[1]व्याकरणमहाभाष्यम्**,** पस्पशाह्निकम्**,** पृ. सं. - १०।।

[2]तद् द्वारमपवर्गस्य वाङ्मलानां चिकित्सितम्। पवित्रं सर्वविद्यानामधिविद्यं प्रकाशते।। वाक्यपदीयम् - १.१४।।

[3]पाणिनीयशिक्षा – ४१-४२॥

[4]प्रधानं च षट्स्वङ्गेषु व्याकरणम्। व्याकरणमहाभाष्य**,** पस्पशाह्निक**,** पृ. सं. - १०

[5]तद् द्वारमपवर्गस्य वाङ्मलानां चिकित्सितम्। पवित्रं सर्वविद्यानामधिविद्यां प्रकाशते।। वाक्यपदीयम् - १.१४

[6]ऋक्तन्त्र - १.४

[7]नन्दिकेश्वर काशिका - १

[8]पाणिनीयशिक्षा - ५६

[9]येनाक्षरसमाम्नायमधिगम्य महेश्वरात्। कृत्स्नं व्याकरणं प्रोक्तं तस्मै पाणिनये नमः।। पाणिनीयशिक्षा - ५६

[10]रक्षार्थं वेदानामध्येयं व्याकरणम्- लोपागमवर्णविकारज्ञो हि सम्यग्वेदान् परिपालयिष्यतीति॥ व्याकरणमहाभाष्य, पस्पशाह्निक**,** पृ. सं. - ११

[11]व्याकरणमहाभाष्य, पस्पशाह्निक, पृ. सं. - १२

[12]आगमैः खल्वपि- ब्राह्मणेन निष्कारणो धर्मः षडङ्गो वेदोऽध्येयो ज्ञेयश्च इति। प्रधानं च षट्स्वङ्गेषु व्याकरणम्। प्रधाने च कृतो यत्नः फलवान्भवति॥ व्याकरणमहाभाष्य, पस्पशाह्निक, पृ. सं. - १३

[13]असन्देहार्थं चाध्येयं व्याकरणम्। याज्ञिकाः पठन्ति- स्थूलपृषतीमाग्नि-वारुणीमनड्वाहीमालभेत इति। तस्यां सन्देहः- स्थूला चासौ पृषती च स्थूलपृषति**,** स्थूलानि पृषन्ति यस्याः सेयं स्थूलपृषतीति। तां नावैयाकरणः स्वरतोऽध्यवस्यति- यदि पूर्वपदप्रकृतिस्वरत्वं ततो बहुव्रीहिः**,** अथ समासान्तोदात्तत्वं ततस्तत्पुरुष इति॥ व्याकरणमहाभाष्य, पस्पशाह्निक, पृ. सं. - १५